शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 8
Issue 2
15 July, 2017

अस्तित्ववादी चेतना और मोहन राकेश के उपन्यास

बीज शब्द :

अस्तित्ववाद, पूंजीवाद, चेतना, मूल्य, भौतिक व्यक्तिवादी, साहित्य दर्शन, मोहन राकेश।

मोहन राकेश ने आधुनिकता बोध के धरातल पर अस्तित्ववादी चिन्तन के परिपार्श्व में अपने उपन्यास की सर्जना की है। इसका विवेचन करते हुए यह कहना अधिक उचित लगता है कि मोहन राकेश का यह सामाजिक अस्तित्व चिन्तन मूलतः व्यक्तिवादी स्तर पर अपनी गहरी छाप बनाए हुए समाज में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षरत मानव की एक ऐसी कथात्मक अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है जो समाज में रहकर भी समाज से जुड़ पाने में विवशता अनुभव करता है। व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना बताती है कि जीवित रहना ही मनुष्य की नियति है। उसे जीवन का अर्थ चुक जाने की स्थिति में भी लाचार होकर जीना हैं क्योंकि पुरानी मान्यताऐं अर्थहीन हो चुकी है। और मनुष्य के सामने कोई ठोस विकल्प भी नही है।

अस्तित्ववादी चिन्तन की आधारभूमि पर विकसित मोहन राकेश के तीनों उपन्यास मुख्यतः नारी पुरूष के बदलतें सन्दर्भ और उनके बीच पनपते जटिल सम्बन्धों की सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करते है।

*****

डॉ० राजनारायण शुक्ल
अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश, भाषा संस्थान, लखनऊ

अस्तित्ववादी चेतना और मोहन राकेश के उपन्यास

अस्तित्ववादी विचारधारा का उद्‌गम जर्मन दार्शनिक 'हसरेल' तथा 'हेडेगर' और 'डेनिश चिन्तक कीर्कगाद' की विचार पद्धतियों से माना जाता है। परन्तु वर्तमान युग में उसकी ख्याति का श्रेय प्रसिद्ध अस्तित्ववादी चिन्तक ज्यॉ पॉल सार्त्र को जाता है। डॉ0 भारत भूषण अग्रवाल कहते है कि 'अस्तित्ववाद मानव जन्म और मानव जीवन को एक अभिनव रूप में ग्रहण करता हैं। वर्गसा ने जिसे चिरन्तन प्रवाहमान एवं परिवर्तनशील कहा यह उसी का अगला चरण है। यह उस युग का वैचारिक विग्रह है। पूंजीवाद फासिज्म का रूप ले चुका हैं। और साम्यवाद शक्तिशाली सुसज्जित वर्ग राज्य का। बाह्य संघर्ष में आबद्ध मनुष्य विवश एवं निरूपाय होकर अपने अस्तित्व के सम्बन्ध में प्रश्न उठाता है तो पाता है कि उसका अस्तित्व अनेक शक्तियों से अनुशासित है, जिन पर उसका कोई वश नहीं हैं।[1]

अस्तित्ववाद साहित्य में मानवीय नियति एवं मानवीय जीवन के यथार्थपरक विश्लेषण के रूप में उपलब्ध होता है। हिन्दी के व्यक्तिवादी उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं में मानवीय चेतना और उसकी नियति का जो यथार्थपरक चित्रण किया है, उसके मूल में अस्तित्ववादी चिन्तन का प्रभाव पडा है। ऐसे उपन्यासकारों में अज्ञेय, नरेश मेहता, देवराज और मोहन राकेश प्रमुख है। मोहन राकेश के उपन्यासों में अस्तित्ववादी चिन्तन का विवेचन निम्नांकित तीन स्तरों पर किया जा सकता है-

01- सामाजिक अस्तित्व चेतना।

02- भौतिक अस्तित्व चेतना।

03- व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना।

आज का व्यक्ति समाज से कटा हुआ जीवन जी रहा है। सामाजिक रूढ़ियों, मान्यताओं के प्रति उसे कोई आशक्ति नहीं है। वह चेतना के धरातल पर सोचता है। वह ईश्वर की सत्ता को नही मानता अत: धर्म पर भी उसे कोई विश्वास नहीं है। समाज के बीच रहकर भी उसकी स्थिति एक द्वीप के समान हैं। मुक्तिबोध ने इस स्थिति का चित्रण इस प्रकार किया है-

"मेरे साथ
खण्डहर में दबी हुई अन्य धुकधुकियों सोचो तो............
कि स्पन्द ऊब...............
पीड़ा भरा उत्तरदायित्व भार हो चला,
कोशिश करो,
कोशिश करो,
जीने की जमीन में गड़कर भी।[2]

मोहन राकेश ने आधुनिकता बोध के धरातल पर अस्तित्ववादी चिन्तन के परिपार्श्व में अपनी उपन्यास सर्जना की है। इसका विवेचन करते हुए यह कहना अधिक उचित लगता है कि मोहन राकेश का यह सामाजिक अस्तित्व चिन्तन मूलत: व्यक्तिवादी स्तर पर अपनी गहरी छाप बनाए हुए समाज में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षमय मानव की एक ऐसी कथात्मक अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है जो समाज में रहकर भी समाज से जुड़ पाने में विवशता अनुभव करता है। सामाजिक अस्तित्व के आधार पर 'अन्धेरे बन्द कमरे' का विवेचन निम्न प्रकार प्रस्तुत है-

"ठकुराइन के अतिरिक्त 'अन्धेरे बन्द कमरे' के सभी पात्र व्यक्तिवादी है। वे धर्म और ईश्वर के प्रति कोई आस्था नहीं रखते। सामाजिक रूढ़ियों की उन्हें कोई चिन्ता नहीं है यहॉ प्रत्येक पात्र समाज और परिवार में रहते हुए भी 'आत्म निर्वासित' जीवन जी रहा हैं। हरवंश और नीलिमा पति-पत्नी होते हुए भी निर्वासित जीवन जी रहे है। मधुसूदन, सुषमा ऊबानू, इबादत अली अकेलेपन से संत्रस्त है। मूल्यों के प्रति विद्रोह की छटपटाहट एक विचित्र स्थिति को जन्म देती हैं। 'तुम्हारे साथ और तुम्हारे बिना, दोनों ही तरह जिन्दगी मुझे असम्भव लगती है।[3] जीवन में एक दूसरे के लिए पूरक की सम्भावनाओं को नकारते हुए नीलिमा और हरवंश अलग-अलग रास्ता चुनते है और असफल रहते हैं। सामाजिक यथार्थ का सन्त्रास मुधसूदन, सुषमा, जीवन भार्गव की वरण की स्वतन्त्रता के अधिकार का गला घोंट देते है। 'न आने वाला कल' में धार्मिक आस्था के प्रति स्पष्ट विद्रोह व्यक्त हुआ हैं। उसके पात्र पादरी के 'सर्मन' को पचा नहीं पाते और घुटन महसूस करते है। मनोज विवाहित होते हुए भी एकाकी, उदास और ऊब का जीवन व्यतीत करने पर अपने को एक 'भय' में जकड़ा हुआ भी अनुभव करता है- वह डर किस चीज का था? उस खामोशी का? अपने अकेलेपन का अपनी सांसों में रूकावट आ जाने के खतरे का? या कि वहॉ होते हुए भी न होने, बीत चुकने के अहसास का।[4]

दूसरी ओर बॉनी अपनी स्वतन्त्रता का उन्मुक्त उपयोग करती है वह किसी पुरूष के नियन्त्रण को स्वीकार नहीं करती, यौन नैतिकता में उसे बिल्कुल विश्वास नहीं। शोभा अपने सामाजिक

1. अग्रवाल भारत भूषण: हिन्दी उपन्यास में पाश्चात्य प्रभाव, पृ0-380

2. मुक्तिबोध: चांद का मुंह टेढ़ा है: पृ0-64
3. मोहन राकेश: अन्धेरे बन्द कमरे, पृ0-153
4. मोहन राकेश: न आने वाला कल, पृ0-11

अस्तित्व को बनाए रखने के लिए मनोज से पुनर्विवाह करती है। परन्तु स्वचेतना उसे मनोज के साथ बांधकर नहीं रहने देती। तीसरी स्थिति में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्ष करते हुए मनोज स्कूल से त्यागपत्र देने का निर्णय लेता है।

'अन्तराल' के सभी पात्र अपने-अपने 'द्वीपों' में जीते है। सीमा, अपनी माँ और भाभी (श्यामा) से कटी रहती है और स्वतन्त्रता का भरपूर फायदा उठाती है। उसे सब 'अजनबी' दिखाई देते है। जब तक देव जिन्दा रहा वह उससे भी एकरस नहीं हो सकी। वह चेतना के धरातल पर सोचती है और इसीलिए कुमार से उसके सम्बन्ध कभी स्वाभाविक नहीं हो पाए। कुमार स्वंय विवाहित है, परन्तु वह विवाह भी उसके अकेलेपन को दूर करने में असमर्थ रहता है। कभी उसका भावात्मक सम्बन्ध कस्बे की एक 'पीली लड़की' से बना था, जो अभी तक उसकी चेतना में छाई हुई है। अस्तित्वादी चिन्तन के स्तर पर आधुनिक बोध से सम्पन्न रचनाकार प्राय: भौतिक अस्तित्व का चिन्तन ही प्रधान मान लेते है और उनके पात्रों का व्यवहार और कार्य का निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर विकसित होता दिखाई देता हैं। यह लक्ष्य मात्र भौतिक अस्तित्व चेतना है। मोहन राकेश ने आधुनिकता के धरातल पर प्रकाशित रचनाओं में भौतिक अस्तित्व की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए यह भी स्पष्ट किया है कि उसके औपन्यासिक पात्रों में ऐसी मानसिकता विद्यमान है, पर वे उसके दास नही है, परिस्थितिक परिवेश में उससे मुक्त भी नही हैं। यही कारण है कि भौतिकवादी युग में व्यक्ति अपने लिए तमाम सुविधाऐं जुटा लेना चाहता है वह विलासी जीवन जीता हैं। उसके सम्बन्धों का एक मात्र आधार आर्थिक होता है इस कारण से व्यक्ति स्वार्थ केन्द्रित हो जाता है उसकी संवेदना मरने लगती है परन्तु अपने सामाजिक अस्तित्व के कारण दुहरा-तिहरा जीवन जीता है। मोहन राकेश के अंधेरे बंद कमरे उपन्यास का पात्र हरवंश स्वयं असफल रहने के कारण अपनी पत्नी के माध्यम से अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है और असफल रहने पर चिढ़ जाता हैं। नीलिमा भी भौतिकवादी है। वह यूरोप जाकर हरवंश ऊबानू के साथ होटल में रूक जाती है, वह टुप के साथ वापस न आकर स्वतन्त्र जीवन जीना चाहती है। मधुसूदन प्रत्यक्ष रूप से आदर्श से बंधा रहता है परन्तु वह ठकुराइन की प्रत्येक भंगिमा में यौन-सन्दर्भो को ही देखता है। वह शुक्ला के प्रति आसक्त होने पर भी इच्छा व्यक्त नही कर पाता। इस प्रकार उपन्यास के अधिकांश पात्र भौतिक जगत में अपने स्वार्थ से पीड़ित दुहरा जीवन जीते है। अपनी भौतिक कामनाओं के उत्कर्ष चिन्तन के धरातल पर 'न आने वाला कल' उपन्यास के सभी पात्र अपने-अपने स्वार्थ में जकड़ें है। वहाँ सभी एक दूसरे के प्रति षड्यंत्र करते हैं ताकि उनका अपना भौतिक सम्बन्ध स्थिर बना रहे। उनके अस्तित्व का संघर्ष उनकी स्वार्थलोलुपता के सामने दम तोड़ देता है।

बॉनी अपने स्वार्थ में कई लोगों से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। चेरी और लैरी मनोज के 'त्यागपत्र' का अपने हित में लाभ उठाना चाहते है। शारदा दूसरा विवाह करने की इच्छा व्यक्त करती है। मनोज स्वयं त्यागपत्र देने के बाद भी भौतिक अस्तित्व की चिन्ता से उबर नहीं पाता। भौतिक अस्तित्ववादी चिन्तन के परिणाम स्वरूप 'अन्तराल' के सभी पात्र दुहरी मानसिक स्थिति में जी रहे हैं। बाजी और सीमा इसीलिए श्यामा को झेल रहे हैं क्योंकि वह कमाती है। बेबी के लिए परिवार की जरूरत श्यामा को उस घर से जोड़े रखती है। अन्यथा वह कभी भी वहाँ से चली गई होती। कुमार 'जीने का अर्थ' का नाम देते हुए भी श्यामा से शारीरिक सम्बध बनाना चाहता हैं। श्यामा कुमार के मण्डी आने की संभावना में अपनी सहेलियों से कुमार के प्रति सामान्य भाव प्रकट करती है परन्तु उसकी वास्तविकता का पता उसकी 'फन्टेसी' कल्पना से चलता हैं। व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना बताती है कि जीवित रहना ही मनुष्य की नियति है। उसे जीवन का अर्थ चुक जाने की स्थिति में भी लाचार होकर जीना है क्योकि पुरानी मान्यताएं अर्थहीन हो चुकी हैं और मनुष्य के सामने कोई ठोस विकल्प भी नही है। ईश्वर की अनुपस्थिति के भाव ने उसे स्वतंत्र और अकेला बना दिया है। अपनी असहायता के लिए वह कोई बहाना नहीं ढूंढ सकता। मनुष्य की यह नियति उसे व्यक्तिवादी बनाती है। वह निरूददेश्य और दिग्भ्रान्त रहता है। 'अन्धेरे बन्द कमरे' उपन्यास के पात्रों में शुक्ला और सुषमा की तरु से निराश मुधसूदन को जीवन व्यर्थ लगता है अपने व्यक्तिवादी अस्तित्व का संकट झेलता हुआ मधुसूदन अन्तत: ठकुराइन के घर में जाने का निर्णय करता है क्योंकि वहीं पहुंचकर उसको अपना अस्तित्व सुरक्षित दिखाई देता है। हरवंश और नीलिमा दोनों व्यक्तिवादी पात्र हैं। अपने जीवन को अर्थ देने में असफल हरवंश नीलिमा में सम्भावना देखता है और घर त्याग कर चली जाने वाली नीलिमा वैयक्तिक चेतना के कारण ही पुन: वापस आ जाती है। सुषमा भी व्यक्तिवादी है। यही अस्तित्व संकट मधुसूदन के साथ उसके जुड़ाव को समाप्त कर देता हैं।

व्यक्तिवादी अस्तित्व चिन्तन की परिणति में 'न आने वाला कल' के पात्र भी जीवन को कोई अर्थ देते हुए नहीं जीते हैं। बॉनी के सामने कोई बाधा नहीं है स्कूल के टीचर्स सड़ चुकी

व्यवस्था में भी अपनी स्थिरता बनाए रखने के लिए विवश हैं। मनोज अपने जीवन की निरर्थकता से ऊबकर 'आत्महत्या' की बात सोचता है, परन्तु उसकी वैयक्तिक चेतना उसे ऐसा करने से रोकती है। शोभा पुनर्विवाह के बांद मनोज से एडजस्ट नही कर पाती और घर छोड़कर खुर्जा चली जाती है। परन्तु अपने अस्तित्व की चिन्ता के कारण ही वह मनोज को खुर्जा से बार-बार पत्र लिखती है। व्यक्तिवादी स्तर पर अपने अस्तित्व की चिन्ता से ग्रसित अन्तराल के पात्र कुमार और श्यामा के सामने भी जीवन का कोई अर्थ नही है। इसे अर्थ देने के लिए जब वे एक दूसरे के निकट आते है तो उनकी वैयक्तिक चेतना उन्हें रोक देती है। कुमार के आवासीय फ्लैट में आकर दोनों स्वत: एक दूसरे के लिए समर्पित होकर अपनी दैहिक मांग की पूर्ति में अपनी अस्तित्व चेतना ही खोज पाते है आन्तरिक सन्दर्भो की गहनता यौन-सम्बन्धों के बीच नहीं उभरती तभी कुमार के साथ यौन संसर्ग करते समय श्यामा को अपने पूर्व प्रेमी की स्मृति उसके निजी अस्तित्व चिन्तन की परिणति का आभास देती है। सीमा का जीवन भी व्यर्थता बोध से पीड़ित है वह आत्मकेन्द्रित एवं आत्मरति से ग्रसित ऐसी नारी पात्र के रूप में अपनी अस्तित्व चेतना की जटिलता चरितार्थ करती है जहाँ रात्रि में पीकर लौटने पर दर्पण के समक्ष निर्वस्त्र रूप में अपनी शारीरिक संरचना के प्रति आत्ममोह से परितृप्ति पाती है। श्यामा देव के सामने कभी खुल नहीं पाती और देव भी अपनी ही पीड़ा में घुटकर मर जाता है। अस्तित्ववादी चिन्तन की आधार भूमि पर विकसित मोहन राकेश के तीनों उपन्यास मुख्यत: नारी-पुरूष के बदलते सन्दर्भ और उनके बीच पनपते जटिल सम्बन्धों की सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। युद्धोत्तर संत्रास औद्योगिक प्राविधिक युग का वर्चस्व एवं स्खलित होती प्रचीन परम्पराओं व नैतिक संस्थाओं ने व्यक्ति के अपने अस्तित्व के प्रति ही एक संकट खडा कर दिया है फलत: व्यक्ति केवल अपने बारे में सोचता है। सामाजिक और पारिवारिक दायित्व-बोध को वह बोझ समझता है और सर्वथा मुक्त जीवन की कामना करता है।

An honest warning to research contributors

The writing of research papers is a very common phenomenon in the academic world. But now-a-days this is done without giving due care to the norms and ethics accepted for writing research papers. Even a small mistake spoils the reputation of the concerned person. We come across several stories of the violation of accepted norms. With the help of Electronic Editing, it is very common to cut ,copy and paste in Research article / thesis formation without giving a reference of the original work. We should always keep in mind that it is not a fare practice. While reviewing, sometimes we come across such malpractices. Such stories suggest that research scholars must be very honest and sincere in their work and must give proper attribution in case they quote any content from any original work.

Editor